इकाई 3 भारत विश्व सत्ता ढाँचे में

इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य

3.1 प्रस्तावना

3.2 भूमंडलीय सत्ता संरचना

3.3 भारत की भू-राजनीतिक स्थिति

3.4 भारत की सत्ता क्षमताएँ

3.5 भारत: एक उभरती हुई शक्ति

3.6 सारांश

3.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

3.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

3.0 उद्देश्य

विश्व सत्ता संरचना में भारत की स्थिति स्पष्ट नहीं हैं। इसका इस तथ्य से पता चलता है कि भारत अन्तरराष्ट्रीय राजनीति में न तो कोई अधीनस्थ भूमिका निभाता है और न ही यह कोई लघु सत्ता है। इस इकाई में विश्व सत्ता संरचना में भारत की बदलती हुई स्थिति का विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप निम्नलिखित बातों के बारे में जान पाएँगे:

- विश्व सत्ता संरचना के लक्षणों की पहचान;
- राष्ट्रीय सत्ता के मौलिक संघटकों की पहचान;
- विश्व सत्ता संरचना में परिवर्तन;
- एक प्रमुख शक्ति के रूप में भारत की स्थिति और क्षमता।

3.1 प्रस्तावना

अन्तरराष्ट्रीय राजनीतिक व्यवस्था, 17वीं शताब्दी में इसकी शुरुआत से, राज्यों की संप्रभुता समानता के सिद्धांत पर आयोजित की गई है। वास्तविक प्रचलन में, सत्ता संरचना की यह पदानुक्रमता राज्यों की इस समानता को एक कथा का रूप देती है। तथापि, सत्ता क्षमताओं के कुछ घटकों, अर्थव्यवस्था और समाज में निरन्तर परिवर्तन हो रहे हैं। सत्ता पदानुक्रम में राज्य की स्थिति परिवर्तनाधीन है। एक ऐसा राष्ट्र जो एक समय गुलामी में जकड़ा हुआ देश था, दूसरे समय में एक प्रमुख शक्ति के रूप में उभर सकता था। इस इकाई में, विश्व संरचना में देश की सुदृढ़ और सौम्य क्षमताओं की जाँच करके भारत की स्थिति का विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है। ऐसा करने से पहले, विश्व सत्ता संरचना के लक्षणों की पहचान करना उपयोगी होगा।

3.2 भूमंडलीय सत्ता संरचना

अन्तरराष्ट्रीय राजनीतिक व्यवस्थाओं का एक महत्त्वपूर्ण लक्षण यह है कि यह अन्तरराष्ट्रीय प्रमुख शक्तियों का लगभग पदानुक्रम रहा है। सभी अन्य शक्तियाँ (लघु शक्तियाँ) प्रमुख शक्तियों के निर्णय

की उद्देश्यात्मक भूमिका के प्रति न्यस्त है। यद्यपि विश्व आर्थिक व्यवस्था राज्यों के समानता के सिद्धांत पर आयोजित है, वास्तविक प्रचलन में, राज्यों की अपनी सत्ता क्षमताओं के आधार पर राज्यों का पदानुक्रम है। सत्ता राज्य की ऐसी शक्ति अथवा क्षमता है जो अन्य राज्य अथवा राज्यों पर अपना प्रभाव छोड़ती है। राज्य की शक्ति आमतौर पर उसकी सैनिक क्षमता, आर्थिक शक्ति और अन्तरराष्ट्रीय मत को अपने पक्ष में करने के लिए उसकी इच्छा और क्षमता द्वारा न्याय-निर्णीत होती है।

तथापि, विभिन्न सत्ता घटकों के सापेक्ष महत्त्व पर कोई सामंजस्य नहीं है। जोसेफ एस नाये का सुझाव है कि सुदृढ़ और सौम्य संसाधनों में सत्ता घटकों का एक व्यापक वर्गीकरण किया जाए। सुदृढ़ सत्ता संसाधनों में सेवा, आर्थिक, प्रौद्योगिकीय और जनसांख्यिकी संसाधन शामिल हैं। ये मूर्त संसाधन हैं जो बल प्रयोग और नियंत्रण की क्षमताएँ मुहैया कराते हैं। दूसरी तरफ, सौम्य सत्ता संसाधन अमूर्त होते हैं। इनमें मानदण्ड, अन्तरराष्ट्रीय संस्थाओं में नेतृत्व की भूमिका, संस्कृति, राज्य क्षमता, रणनीति तथा राष्ट्रीय नेतृत्व शामिल हैं। सौम्य संसाधन आम राय (सहमति) की प्रेरणा देने तथा मिलकर कार्य करने (समान लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए दूसरों को सहयोग देने को तैयार करना) के लिए राज्य को सक्षम बनाते हैं। सौम्य सत्ता स्वरूप से कम निग्रही होती है। कुछ सौम्य सत्ता संसाधन जैसे राज्य की क्षमता, रणनीतिक एवं राजनीतिक शक्ति तथा राष्ट्रीय नेतृत्व की गुणवत्ता राज्य की अन्तर्निहित क्षमताओं को वास्तविक शक्ति में बदलने के लिए महत्त्वपूर्ण हैं।

प्रमुख सत्ताधारकों के पास शक्ति के सभी घटक होते हैं जो उन्हें संघर्ष अथवा सहयोग के समय, अन्तरराष्ट्रीय व्यवस्था का स्वरूप और उसके भावी विकास को अवधारित करने की शक्ति प्रदान करते हैं। उनके पास अन्तरराष्ट्रीय व्यवस्थाओं में सभी राज्यों को प्रभावित करने की शक्ति होती है क्योंकि उनके पास शक्ति को भूमंडलीय तौर पर प्रक्षेपित करने तथा अपने क्षेत्रों के पार आक्रामक और रक्षात्मक क्रियाकलापों के संचालन की क्षमता होती है। प्रकारात्मक तौर पर, प्रमुख सत्ताधारकों के भूमंडलीय अथवा महाद्वीपीय हित होते हैं तथा उनके सुरक्षा लक्ष्य सीमाओं से परे होते हैं और उनमें अन्तरराष्ट्रीय व्यवस्था के तहत सत्ता संतुलन और व्यवस्था बनाए रखना शामिल है। जिन राज्यों के पास इन संसाधनों की कमी होती है, वे लघु सत्ताधारक होते हैं तथा प्रमुख सत्ताधारकों के दबावों से पराजेय रहते हैं।

प्रमुख सत्ताओं और लघु सत्ताओं के बीच ऐसे राज्यों का वर्ग होता है जो सत्ता (अथवा राज्यों को प्रभावित करने वाली व्यवस्था) के स्वतंत्र केन्द्र हैं जिनके पास कुल मिलाकर अन्तरराष्ट्रीय व्यवस्थाओं को प्रभावित करने का लीवर ही नहीं होता अपितु विदेश नीति स्वायत्तता की विशिष्ट स्थिति को बनाए रखने की पर्याप्त क्षमताएँ तथा विशेष रूप से सुरक्षा के क्षेत्र में, उनके अपने निजी क्षेत्र में, अवांछित निर्णयों के अनुप्रयोग का विरोध करने की क्षमता होती है। प्रमुख सत्ताओं, जिनके पास भूमण्डलीय अथवा व्यापक प्रभाव वाला तंत्र होता है, से भिन्न, सत्ता के ये स्वतंत्र केन्द्र कतिपय क्षेत्र में प्राय: वर्चस्व अथवा आधिपत्य वाले होते हैं। मार्टिन राइट के अनुसार, इनका अधिकांशत: प्रमुख और लघु सत्ताओं के बीच अवस्थित उनकी प्रास्थिति के दृष्टिगत महान् क्षेत्रीय शक्तियों अथवा मध्यम सत्ताधारकों के रूप में होता है।

अन्तरराष्ट्रीय राजनीतिक व्यवस्था का एक अन्य महत्त्वपूर्ण लक्षण है उसकी गतिशीलता अर्थात् निरन्तर परिवर्तन। यह मात्र इसलिए नहीं है कि सत्ताओं के कुछ घटक (जैसे नीचे चर्चा की गई है) परिवर्तनाधीन हैं परन्तु यथार्थ में इंगित करते हैं कि प्रमुख शक्तियों के बीच निरन्तर संघर्ष का कारण भी होता है। चूँकि 16वीं शताब्दी का यूरोप अन्तरराष्ट्रीय व्यवस्था में शामिल हुआ, यह प्रमुख शक्तियों के उत्थान और पतन की साक्षी है। यह प्रक्रिया प्रमुख युद्धों के माध्यम से व्यापक तौर पर अपनाई गई तथा इसने अनेक देशों को विश्व के विभिन्न नाटकघरों में पहुँचा दिया। युद्ध के बाद हुए समाधानों में आवश्यक सैनिक और आर्थिक सम्पन्नता वाले विजेताओं को प्रमुख सत्ता की प्रास्थिति मंजूरी मिली जबकि अधिकांश मामलों में ऐसी प्रास्थिति पूर्णरूपेण लुप्त हो गई। इस प्रकार, 18वीं शताब्दी में, स्पेन, पुर्तगाल और नीदरलैंड युद्धों में अपनी पराजय अथवा उपनिवेशी साम्राज्यों के समाप्त होने के बाद वे अपनी प्रमुख सत्ता प्रास्थिति से वंचित हो गए। ऑस्ट्रिया –

हंगरी ने प्रथम विश्वयुद्ध के बाद अपनी प्रमुख सत्ता स्थिति गवाँ दी। द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद जर्मनी और जापान प्रमुख सत्ता के रूप में चीन द्वारा प्रतिस्थापित हुए। संयुक्त राज्य, सोवियत संघ, ब्रिटेन, फ्रांस और चीन, जो उस युद्ध में विजेता के रूप में उभरे, को प्रमुख सत्ता प्रास्थिति मंजूर की गई तथा वे संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद् के स्थायी सदस्य बन गए। प्रतिबन्धात्मक तौर पर, शीतयुद्ध अवधि के दौरान मात्र दो महाशक्तियाँ, संयुक्त राज्य और सोवियत संघ, प्रमुख सत्ताओं के रूप में माने गए। अन्य तीन, ब्रिटेन, फ्रांस और चीन, जो कभी भी महाशक्तियों की विश्व दौड़ में शामिल नहीं हुए, संक्षेप में, द्वितीय स्तर की प्रमुख सत्ताएँ थीं।

युद्ध के बाद के वर्षों में, विश्व सत्ता संरचना में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हुए हैं। आरंभ में, दो महाशक्तियों के बीच शीतयुद्ध संघर्ष ने द्वि-ध्रुवीय सत्ता संरचना को बढ़ावा दिया। अधिकांश राष्ट्रों के पास एक अथवा दोनों महाशक्तियों के साथ शामिल होने अथवा उन्हें छोड़ देने का किंचित विकल्प था। तथापि, ऐसी स्थिति लम्बे समय तक नहीं रही क्योंकि संयुक्त राज्य ने लम्बे समय तक वियतनाम के साथ युद्धरत होने के कारण अपनी स्थिति कमजोर कर ली थी। विश्व सत्ता संरचना संयुक्त राज्य, सोवियत संघ, यूरोप, जापान और चीन के वर्चस्व वाली बहु-ध्रुवीय व्यवस्था की ओर अग्रसर होने लगी। तथापि, इस प्रबंधन के समेकन से पहले, सोवियत संघ का विघटन हो गया। संयुक्त राज्य एकमात्र ऐसे राज्य के रूप में उभरा जो 'एकल महाशक्ति' की उपाधि का पात्र था और जिसके पास योजनाबद्ध और प्रभावकारी क्षमताएँ थीं। इस भूमिका के लिए अन्य संभव प्रतिद्वन्द्वी सामान्यत: या तो अपूर्ण सत्ता (रूस, चीन और जापान) बने रहे अथवा संयुक्त राज्य के अधीनस्थ सैनिक सहायक (जापान, यूरोप) बन गए। आज की स्थिति में उनका सामरिक महत्त्व, महाशक्तियों के रूप में उनके संभाव्य प्रकटीकरण में अन्तर्निहित है जो अधिक दूर नहीं हैं।

3.3 भारत की भू-राजनीतिक स्थिति

आधुनिक राज्य के रूप में इसकी शुरुआत के ठीक बाद, भारत ने स्वयं को एक संभाव्य प्रमुख सत्ता के रूप में देखा है। इसकी इस प्रकार की तस्वीर मात्र इस तथ्य से नहीं उभरी है कि भारत एक ऐतिहासिक सभ्यता का स्थल रहा है अपितु ऐसा इसकी संभाव्य आर्थिक और सैनिक शक्ति को मान्यता तथा इससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण भ-ूराजनीतिक घटकों के कारण हुआ है। इसमें उसकी विदेश नीति के लिए महत्त्वपूर्ण निहितार्थ अन्तर्ग्रस्त था।

भारत भारतीय उपमहाद्वीपीय क्षेत्र में अवस्थित है, जो एकमात्र भूराजनीतिक किलेबन्दी करता है। यह उत्तर में हिमालय तथा दक्षिण में हिन्द महासागर से घिरा हुआ है। इसके अतिरिक्त, यद्यपि दक्षिण एशिया सात राज्यों में विभाजित है, उपमहाद्वीप कुछ सीमा तक एकमात्र सभ्यता का जटिल शैल संघ है। यह यूरोप की तुलना में, व्यापक आयामों वाला एक भू-राजनीतिक क्षेत्र है। हिन्द महासागर के आर-पार स्थित तथा फारस की खाड़ी और मलक्का के जलडमरूमध्य से रक्षित इसकी अवस्थिति क्षेत्र को सामरिक महत्त्व प्रदान करती है।

दक्षिण एशिया क्षेत्र, कुल मिलाकर, मात्र इस अर्थ में प्रत्यक्षत: भारत-केन्द्रिक नहीं है कि भारत इस क्षेत्र के लगभग तीन-चौथाई भूमि क्षेत्र और आबादी पर आधिपत्य बनाए हुए है। क्षेत्र के भीतर भारत, एकमात्र तौर पर, क्षेत्र की भूराजनीति के मध्य में है जबकि क्षेत्र के अन्य देश आपस में एक-दूसरे के साथ नहीं बल्कि इसके साथ सीमाओं को सहयोजित करते हैं।

भारत की व्यापक तौर पर सुपरिभाषित आधिपत्य स्थिति तथा स्वत: स्पष्ट भारत केन्द्रिक भूराजनीतिक क्षेत्र का यह तात्पर्य भी था कि इसकी सुरक्षा को खतरा क्षेत्र के बाहर प्रमुख सत्ताओं से था न कि दक्षिण एशियाई क्षेत्र के भीतर अन्य शक्तियों से। परिणामस्वरूप, पश्चिमी गोलार्द्ध में संयुक्त राज्य की तरह भारत राष्ट्रीय सुरक्षा की धारणा से अधिनेतृत्व की स्थिति में हैं जिसके लिए उपमहाद्वीप से बाहरी ताकतों के निष्कासन की आवश्यकता है। सहज तौर पर, सुरक्षा की इसकी धारणा मात्र, राष्ट्रीय न होकर भू-राजनीतिक और क्षेत्रीय भी है। तथापि, सुरक्षा की ऐसी धारणा

अवश्यमेव एक प्रमुख शक्ति के रूप में अन्य क्षेत्रों के साथ अन्तर्क्रिया को अपरिहार्य बनाती है; विश्व मानचित्र पर इसकी भूमिका का विस्तार इस प्रकार क्षेत्र में भारत के वर्चस्व में अन्तर्निहित है।

एक प्रमुख सत्ता के रूप में भारत की तस्वीर, जिसे भारतीय संभ्रांत लोगों द्वारा सहयोजित किया गया था, जवाहरलाल नेहरू द्वारा 1948 में निर्वाचन सभा को यथासूचित "भारत की अपरिहार्यता" से अभिप्रेत थी "जो अपनी विशाल सशक्तता के कारण तथा इस तथ्य के कारण एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रहा था कि वह आबादी के संदर्भ में सबसे बड़ी राजनीतिक इकाई है तथा ऐसा उसके संसाधनों के कारण भी संभव है।" नेहरू और उनके उत्तराधिकारियों ने अधीनस्थ की भूमिका के पक्ष में प्रमुख शक्तियों के लक्ष्य के रूप में भारत के लिए प्रास्थिति को नकार दिया।

संभाव्य प्रमुख सत्ता के रूप में भारत की छवि तथा घरेलू और विदेश नीतियाँ, जिनका उद्देश्य एक पुनरीक्षणवादी भूमिका में भारत की संभावनाओं को महसूस करना है, अन्तर्निहित पूर्वानुमान के तौर पर यह है कि कुछ के वर्चस्व वाली विद्यमान भूमण्डलीय सत्ता संरचना कतिपय सीमा तक स्वीकार्य नहीं है क्योंकि यह भारत की स्वतंत्रता का अतिक्रमण करती है। यह पूर्वानुमान नेहरू तथा उनके उत्तराधिकारियों द्वारा दृढ़ता के साथ महसूस किया गया था भले ही इसके बारे में कुछ नहीं कहा गया। यह उस विकास रणनीति में घरेलू और विदेशी दोनों नीतियों से स्पष्ट था-कि जिसने आत्म-विश्वास पर बल दिया था तथा सुदृढ़ शक्ति क्षमताओं को मजबूत किया था और गुट-निरपेक्ष विदेश नीति में उसने विश्व कार्यों में स्वतंत्रता और सक्रियतावाद पर बल दिया था। यह प्रमुख शक्तियों के आधिपत्य को स्वीकार करने से इसके इंकार तथा इसके उस विरोध में स्पष्ट है जिसमें प्रमुख शक्तियों द्वारा अप्रसार संधि और इसी प्रकार की अन्य सुरक्षा व्यवस्थाओं में शामिल होने से मना करके परमाणु शक्ति के रूप में उभरने के लिए अपने विकल्प पहले ही बन्द करने के प्रयास किए गए हैं।

तथापि, भारत ने अपनी पुनरीक्षणवादी भूमिका को पूर्णरूपेण विद्रोही सत्ता की भूमिका ग्रहण करने के बिन्दु तक नहीं पहुँचाया है। वह प्रमुख शक्तियों के साथ प्रत्यक्ष टकराव से बचा है तथा उसने प्रमुख शक्तियों को उनकी निजी अभिकल्पना के अनुसार विश्व को संगठित करने के उनके प्रयासों को कमोबेश सीमित चुनौती प्रस्तुत की है। इस प्रकार, भारत एक सुधारवादी तथा आम सत्ता के मध्य में रहा है चाहे वह घर पर हो अथवा विदेश में।

ठीक उसी तरह जहाँ भारत की तरफ से प्रमुख सत्ता की भूमिका प्राप्त करने के लिए सुस्पष्ट आग्रहपूर्ण आन्दोलन है, वहीं इसके प्रति विद्यमान प्रमुख सत्ताओं, प्रमुखत: संयुक्त राज्य और हाल के वर्षों में, चीन की तरफ से समान रूप से शक्तिपूर्ण विरोध है। आरंभिक वर्षों में, यह चिन्ता थी कि भारत की सक्रियतावादी भूमिका विकासशील सत्ता पर अपने प्रभाव का परिगमन करेगी, संयुक्त राज्य ने भारत के क्षेत्रीय परिरोधन की नीति अपनाई। इस परिरोधन नीति में पाकिस्तान को सैनिक शक्ति से विभूषित करना तथा उसे दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय संघर्ष में उलझाए रखना शामिल था। इसमें उस सामग्री और प्रौद्योगिकीय सहायता के लिए इन्कार भी शामिल था जो भारत की सुदृढ़ शक्ति क्षमताओं में योगदान देते। 1970वें दशक से, विशेष रूप से भारत द्वारा 1974 में अपनी नाभिकीय युक्ति (Device) का विस्फोट करके अपनी परमाणु क्षमता का प्रदर्शन किए जाने के बाद, एक व्यवस्था लागू है जिसका उद्देश्य उन प्रौद्योगिकियों पर रोक लगाना है जो भारत की परमाणु और प्रक्षेपास्त्र क्षमताओं में योगदान की स्थिति पैदा करें। शीत-युद्ध के बाद की अवधि में, संयुक्त राज्य ने परमाणु अप्रसार संधि को लागू करने के लिए अपने प्रयासों को आगे बढ़ाया जो पाँच प्रमुख सत्ताओं का परमाणु एकाधिकार सुरक्षित रखता था तथा भारत जैसी उभरती हुए सत्ताओं पर उसकी रोक लगाता था। भारत के प्रति चीन की नीति भी एक प्रकार के परिशोधन की नीति रही है। 1963 से, चीन ने पाकिस्तान के भारत के साथ संघर्ष में सक्रियता से पाकिस्तान का पक्ष लिया है तथा पाकिस्तान को प्रौद्योगिकी, संघटकों और सामग्री की आपूर्ति करके उसकी परमाणु और प्रक्षेपास्त्र क्षमताओं के निर्माण में सहयोग दिया है।

बोध प्रश्न 1

नोट : i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए रिक्त स्थान का प्रयोग करें।

ii) अपने उत्तर के लिए इकाई के अंत में संकेत देखें।

1) सौम्य शक्ति संसाधन क्या हैं?

....

....

....

....

....

2) एक प्रमुख सत्ता की चारित्रिक विशेषताओं की पहचान करें। मध्यवर्गीय शक्तियाँ उनसे किस प्रकार भिन्न हैं?

....

....

....

....

....

3) प्रमुख शक्तियों ने भारत की शक्ति प्रक्षेपण क्षमताओं पर रोक लगाने के लिए किस प्रकार प्रयास किए हैं?

....

....

....

....

....

3.4 भारत की सत्ता क्षमताएँ

विश्व सत्ता संरचना में भारत की स्थिति संदिग्ध है। यह इस तथ्य से प्रकट होता है कि भारत एक मध्यस्तरीय शक्ति है। यह उन प्रमुख शक्तियों से सम्बन्ध नहीं रखता जो अन्तरराष्ट्रीय व्यवस्था के भाग्य और प्रारब्ध के बारे में सजीव निर्णय लेती हैं। यह उन लघु शक्तियों में से नहीं है जो सीमित विदेश नीति के स्वायत्तता वाले प्रमुख शक्तियों के निर्णयों का लक्ष्य हो। भारत की वस्तुपरक प्रास्थिति क्या है? यह विद्यमान प्रमुख सत्ताओं (संयुक्त राज्य, रूस, चीन, ग्रेट ब्रिटेन और फ्रांस) तथा प्रमुख आर्थिक सत्ताओं (जापान और जर्मनी) के मुकाबले कहाँ खड़ा है?

सौम्य क्षमताओं के क्षेत्र में, भारत की परम्परागत क्षमताओं का प्रमुख सत्ताओं की उसी प्रकार की क्षमताओं से कोई [illegible] नहीं है, यद्यपि इसके पास चीन और संयुक्त राज्य के बाद, तृतीय

विशालतम सशस्त्र सेनाएँ हैं। तथापि, लम्बी दूरी और त्वरित नियोजन की इसकी क्षमताएँ पाँच प्रमुख सत्ताओं की तुलना में सीमित हैं। भारत की शक्ति प्रक्षेपण क्षमताएँ दो मुकाबलों पर सक्रिय रक्षा मुहैया कराने की आवश्यकता द्वारा सीमित कर दी गई है – एक अपेक्षाकृत लघु परन्तु दृढ़ निश्चयी विरोधी, पाकिस्तान तथा दूसरा उत्तर में प्रमुख सत्ता, चीन है।

आर्थिक सम्पन्नता के संदर्भ में, भारत, जैसा कि इसने नई सहस्राब्दी में प्रवेश किया, विश्व में क्रय शक्ति संतुलन में मात्र संयुक्त राज्य, चीन और जापान के बाद चौथी विशालतम अर्थव्यवस्था के रूप में उभरा है। तथापि, इसका सकल घरेलू उत्पाद 450 बिलियन डॉलर तथा प्रति व्यक्ति आय मात्र 450 डॉलर है, भारत किसी भी प्रमुख सत्ता के मुकाबले नीचे क्रम में जाता है। इसकी लगभग 30 करोड़ आबादी जो कुल आबादी का लगभग 30 प्रतिशत है, गरीबी रेखा से नीचे निर्वाह करती है। आर्थिक प्रतिस्पर्द्धा के मुकाबले में भी, वर्ष 2000 में, भारत 49वें क्रम पर था। भारत की कमजोर आर्थिक नीति शोचनीय है क्योंकि सत्ता के अन्य घटक जैसे सैन्य क्षमता और आबादी की उत्पादनशीलता आर्थिक प्रगति के साथ व्यापक तौर पर वृद्धि की ओर उन्मुख हैं।

आबादी के आकार के संदर्भ में, भारत चीन के बाद दूसरे स्थान पर है। परन्तु भारत के लिए आबादी एक परिसम्पत्ति और अभिशाप दोनों है। इसके उत्तर प्रदेश राज्य (17.6 करोड़) की आबादी अधिकांश प्रमुख सत्ताओं, रूस (14.7 करोड़), ग्रेट ब्रिटेन (5.9 करोड़) तथा फ्रांस (5.9 करोड़) की आबादी से अधिक है। भारत का मध्य वर्ग, जो विश्व में तृतीय विशालतम स्थान पर है, निश्चित रूप से एक परिसम्पत्ति है, क्योंकि सभी प्रमुख सत्ताएँ (चीन को छोड़कर) भारतीय मानव संसाधनों पर निर्भर हैं। ऐसा घटती हुई जन्म दरों और बढ़ती हुई उम्र वाली आबादी के कारण है। तथापि, भारत की विशाल अकुशल और अशिक्षित जनता देश की शक्ति क्षमता के लिए एक अभिशाप है।

सौम्य शक्ति सूचकांकों के संबंध में तुलना करना कठिन है क्योंकि ये अमूर्त होते हैं। सौम्य शक्ति संसाधन सुदृढ़ शक्ति संसाधनों के पूरक हैं और अधिकाधिक अन्तर्निभर विश्व में, बाह्य तौर पर राज्य की शक्ति के अनुप्रयोग और संरक्षण के लिए कम लागत वाले उपाय के रूप में उनका महत्त्व महत्त्वपूर्ण होता जा रहा है।

प्रमुख सत्ताएँ अपनी अन्तरराष्ट्रीय प्रास्थिति को वैध बनाने के लिए मानदण्ड प्रयोग करती हैं। इस संबंध में, भारत का नियामक प्रभाव विकासशील विश्व में यौक्तिक आधार पर उत्कृष्ट रहा है। भारत ने विकासशील देशों की तरफ से निरन्तर आवाज उठाई है। गुट-निरपेक्ष आन्दोलन का नेता होने के नाते, यह भूमंडलीय समानता और नई अन्तरराष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था का विजेता बन चुका है। यह उदाहरण अन्तरराष्ट्रीय व्यापार वार्ता और संयुक्त राष्ट्र फोरम जैसे संयुक्त राष्ट्र व्यापार एवं विकास सम्मेलन (UNCTAD) में भारत की स्थिति को स्पष्ट करता है। अतिरिक्त लोकतंत्र के रूप में भारत का अपना पिछला रिकॉर्ड इसकी नियामक शक्ति का भी संवर्द्धन करता है।

प्रमुख शक्तियाँ अपनी स्थिति की वैधता के लिए संस्थाओं का प्रयोग करती हैं। इस संदर्भ में, भारत अनेक अंतरराष्ट्रीय आर्थिक संस्थाओं और शासनों का सक्रिय सदस्य रहा है। इसने समय-समय पर, जी-77, जी-20 और गुट-निरपेक्ष ग्रुप में अपने नेतृत्व के माध्यम से संस्थागत शक्ति का प्रयोग किया है। 1950वें दशक के प्रारंभ से संयुक्त राष्ट्र शान्तिपूर्ण प्रयासों में इसका योगदान भी इसके संस्थागत प्रभाव में वृद्धि करता है।

तथापि, भारत शक्ति के अन्य स्रोतों जैसे राज्य की क्षमता, रणनीति और राष्ट्रीय नेतृत्व, में निचले क्रम पर है। भारतीय राज्य अपनी आबादी के बीच वफादारी और अनुशासन पैदा करने तथा पर्याप्त शक्ति का विकास करने में असमर्थ रहा है। 1960वें दशक में, भारत का उसके द्वारा अधिनियमित नीतियों को लागू करने में विफलता के कारण एक 'सौम्य राज्य' के रूप में वर्णन किया गया। रणनीति और राजनीति के क्षेत्र में, भारत का रिकार्ड अस्तव्यस्त है। जहाँ इसके राजनय के वर्चस्व विरोधी प्रकरण ने तृतीय विश्व की एकता को नकली आवरण देते हुए भूमंडलीय संस्थाओं में भूमिका निभाने में तथा उत्तर और दक्षिण मुद्दों पर सौदेबाजी में सहायता की, वहीं इसने संयुक्त राज्य

पर काबू पाने और संतुलन बनाए रखने का प्रयास किया। राष्ट्रीय नेतृत्व भी जो अन्य शक्ति संसाधनों को अन्तरराष्ट्रीय प्रभाव में बदलने के लिए महत्त्वपूर्ण था, एक गड्ड-मड्ड थैले के रूप में रहा है। स्वतंत्रता के बाद आरंभिक वर्षों में, भारत का अन्तरराष्ट्रीय प्रभाव प्रमुखत: जवाहरलाल नेहरू के नियंत्रणकारी नेतृत्व के कारण रहा है। यद्यपि 1962 में चीन-भारत युद्ध के उत्क्रमणों के बाद भारत आभ्यान्तरिक तौर पर सोचने लगा। श्रीमती इन्दिरा गाँधी ने भी समुद्रपारीय देशों पर अपना कुछ प्रभाव छोड़ा।

3.5 भारत: एक उभरती हुई शक्ति

शीत युद्ध के बाद की अवधि में, दो महत्त्वपूर्ण कारणों से भारत को एक उभरती हुई शक्ति के रूप में देखा गया है। प्रथमत:, इसकी सुदृढ़ शक्ति क्षमताएँ, जहाँ प्रमुख शक्तियों की क्षमताओं से पिछड़ रही हैं, अन्य क्षेत्रीय शक्तियों जैसे ब्राजील, इण्डोनेशिया, ईरान, पाकिस्तान, नाइजीरिया और मिश्र, की क्षमताओं से पर्याप्त उत्कृष्ट हैं। 30 करोड़ का भारतीय मध्य वर्ग इंडोनेशिया (20.7 करोड़) और ब्राजील (16.8 करोड़), जो दो विशालतम क्षेत्रीय शक्तियाँ हैं, की आबादी से काफी अधिक है। इन क्षेत्रीय शक्तियों में से किसी के भी पास भारत के मुकाबले सकल कच्ची सैन्य क्षमताएँ नहीं है। आर्थिक क्षेत्र में, भारत के पास ब्राजील के अलावा विशालतम अर्थव्यवस्था है, यद्यपि प्रति व्यक्ति डॉलर आय के संदर्भ में, सभी क्षेत्रीय शक्तियाँ, नाइजीरिया और पाकिस्तान को छोड़कर, भारत से ऊपर हैं।

दूसरे, भारत तेजी से बदल रहा है और सुदृढ़ शक्ति क्षमताओं के लगभग सभी सूचकांकों में अपनी स्थिति को मजबूत कर रहा है, यद्यपि सुधार का स्तर एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में परिवर्तनशील है। 1990 वें दशक के आरंभ में, नकदी संकट से ग्रस्त भारत ने अपने बाज़ार मुक्त कर दिए और विश्व अर्थव्यवस्था के साथ एकता कायम की। तदोपरान्त, इसकी औसत वार्षिक विकास दर 6 प्रतिशत से ऊपर रही है। चूँकि इसके फैलते हुए बाज़ार विदेशी निवेशकों और निर्यातकों के लिए आकर्षक स्थल बन चुके हैं, भारत में कम से कम आला क्षेत्र जैसे सूचना प्रौद्योगिकी, जैव प्रौद्योगिकी और सम्बन्धित क्षेत्रों, में एक प्रमुख आर्थिक शक्ति के रूप में उभरने में आत्मविश्वास की विशाल स्थिति प्राप्त कर ली है। भारत ने उपमहाद्वीप में और उसके परे क्षेत्रीय आर्थिक सहयोग को बढ़ावा देने के लिए आधार के रूप में अपने विशाल और विस्तृत बाज़ार की ओर देखना आरंभ कर दिया है। 1990 वें दशक में, दक्षिण एशियाई क्षेत्र के भीतर निकटतर आर्थिक सम्बन्धों को बढ़ावा देने के अपने प्रयास में, भारत ने 'अन्योन्यता से अधिक' मनोभाव से अपने पड़ौसियों के साथ आर्थिक सहयोग में अन्योन्यता की धारणा को प्रतिस्थापित कर दिया है। भारत की महत्त्वाकांक्षा दक्षिण एशिया क्षेत्र से परे पहुँच चुकी हैं और यह 1997 में भारतीय सामुद्रिक परिधीय क्षेत्रीय सहयोग संघ (IOR&ARC) का एक सक्रिय समर्थक बन गया। यह एशियान क्षेत्रीय फोरम का एक पूर्ण संवाद-लेखन भागीदार भी बन गया। जहाँ ये हलचलें स्थिति निर्धारण में प्रमुखत: आर्थिक हैं, वही लम्बी दौड़ में उनमें सामरिक निहितार्थों के होने की संभावना है।

सैन्य क्षेत्र में, भारत की क्षेत्र से परे शक्ति प्रक्षेपण क्षमताएँ समेकित प्रक्षेपास्त्र विकास कार्यक्रम, जो 1980वें दशक के आरंभ में चलाया गया था, को विभिन्न सरकारों द्वारा दिए गए अनवरत समर्थन के परिणामस्वरूप तेजी से बढ़ रही हैं। इस कार्यक्रम के परिणामस्वरूप प्राक्षेपिक प्रक्षेपास्त्रों का दायरा बढ़ा है जिनमें 1990वें दशक में 1500 कि.मी. तक मारक क्षमता वाला अग्नि-I प्रक्षेपास्त्र भी शामिल है। इस कार्यक्रम में अग्नि प्रक्षेपास्त्र की अधिक मारक क्षमता तथा प्राक्षेपिक प्रक्षेपास्त्रों के विकास की योजनाएँ हैं। इनके साथ, भारत की सैन्य क्षमता विकास की ओर तत्पर है जिससे सुदूर पूर्व पश्चिम एशिया और मध्य एशिया तथा आस्ट्रेलिया को प्रभावित किया जा सके। भारत और रूस ने सफलतापूर्वक क्रूस प्रक्षेपास्त्रों का उत्पादन किया है। अब तक सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण विकास में, जिसने विश्व सत्ता संरचना में भारत की स्थिति में वृद्धि की है, मई 1998 में परमाणु सम्पन्न होने का निर्णय लिया गया है।

सामरिक क्षेत्र में चुनौतियों पर काबू पाने के अपने प्रयास-सोवियत संघ के विघटन और इसी के साथ विशेष भारत-सोवियत सम्बन्ध, नाभिकीय हथियारों के ऊपर अपना एकाधिकार कायम रखने के लिए अप्रसार संधि को मजबूती प्रदान करने तथा नाभिकीय विकल्प का अभ्यास कर रहे भारत को प्रतिबंधित करने के लिए प्रमुख शक्तियों के गहन प्रयासों तथा चीन द्वारा पाकिस्तान को परमाणु और प्रक्षेपास्त्र उपस्कर तथा प्रौद्योगिकी के अन्तरण की संयुक्त राज्य द्वारा अनदेखी से भूमिगत नाभिकीय परीक्षण करके अपने निर्णय से प्रमुख शक्तियों की भारत द्वारा अवज्ञा हुई और भारत परमाणु अस्त्र सम्पन्न राज्य के रूप में उभरा। प्रमुख शक्तियों ने भारत की इस घोषणा से कि वह अपनी आवश्यक संयतता के कारण भले ही सीमित दायरे में, उनके वर्चस्व के लिए एक चुनौती के रूप में परमाणु अस्त्र सम्पन्न राज्य के रूप में था, परमाणु परीक्षणों को सही-सही महसूस किया।

प्रमुख शक्तियों की प्रथम प्रतिक्रिया नाभिकीय परीक्षणों की निन्दा करना था। उनमें से कईयों ने भारत का राजनीतिक रूप से बहिष्कार करने तथा उसे, अनुशास्तियों, आर्थिक सहायता के निलम्बन और अन्तरराष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं से कर्जे की माँग की। इस विश्वास के साथ कि इसकी अर्थव्यवस्था आर्थिक दबावों को बरदाश्त करने के लिए स्थिति-स्थापन में सक्षम थी, भारत ने उसका कठोरता से प्रतिकार किया। प्रमुख शक्तियों के बीच शीघ्र ही सतही मतभेद उभरे कि चुनौती, से किस प्रकार निपटा जाए। रूस और फ्रांस ने, अनुशास्तियों और राजनीतिक बहिष्कार के विरोध के माध्यम से, अपने विभिन्न समाजों में वचन और कर्म से कोई संदेह नहीं छोड़ा। फ्रांस की स्थिति विश्व को एक सहकारी विविध-ध्रुवीय दिशा में पुनर्गठित करने की उसकी विशाल रणनीति से उभरकर सामने आई। इन परिस्थितियों में, संयुक्त राज्य ने भारत के साथ एक सामरिक वार्ता की पहल की। परिणामस्वरूप संयुक्त राज्य की तरफ से भारत को यथार्थत: एक परमाणु सम्पन्न राज्य के रूप में मानने के लिए भले ही औपचारिक तौर पर एक मौन और आंशिक समझौता हुआ संयुक्त राज्य परमाणु अप्रसारण के अपने अन्तिम लक्ष्य के प्रति कायम रहा। चीन को छोड़कर, अन्य प्रमुख शक्तियों ने भारत के साथ सामरिक वार्ता शुरू कर दी है। अब तक परमाणु अस्त्र सम्पन्न शक्ति के रूप में भारत के उत्थान से चीन प्रतिकूल तौर पर सर्वाधिक प्रभावित हुआ है क्योंकि इस उत्थान से एशिया के ऊपर चीन के एकमात्र और अबाधित वर्चस्व के दावे के अवमूल्यन की संभावनाएँ प्रकट हुई हैं। इसने भारतीय परीक्षणों की सर्वाधिक आलोचना की और संयुक्त राज्य की भारत के साथ वार्ता पर उत्तेजना प्रकट की परन्तु यह भी भारत के साथ सामान्य सम्बन्ध स्थापित करने के लिए अग्रसर हुआ है तथा इसने भारत के साथ सुरक्षा वार्ता भी की है। इस प्रकार, परीक्षणों के दो वर्षों के भीतर, प्रमुख शक्तियों द्वारा भारत के साथ व्यवहार में भारी परिवर्तन देखा गया। परमाणु परीक्षणों ने अन्य प्रमुख शक्तियों के साथ भारत की राजनीतिक और राजनयिक सौदेबाजी क्षमता में वृद्धि की है जैसा उन सामरिक वार्ताओं से स्पष्ट है जो इसने सभी प्रमुख शक्तियों के साथ आगे बढ़ने के लिए आरंभ की है। अब भारत प्रमुख शक्ति प्रास्थिति के लिए उम्मीदवार के रूप में, भले ही सार्वत्रिक तौर पर न हो, गंभीरता से लिया जाता है।

अंतरराष्ट्रीय व्यवस्था में स्वयं को मध्यस्तरीय शक्ति से प्रमुख शक्ति वाले उम्मीदवार के रूप में पुनर्स्थापित करके भारत संयुक्त राष्ट्र संघ की पुनर्गठित सुरक्षा परिषद् में स्वयं के लिए स्थायी सदस्यता प्राप्त करने के लिए कार्य कर रहा है। अब कुछ समय से, संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद् के पुनर्गठन की माँग हो रही है जिससे विश्व सत्ता संरचना में परिवर्तनों को प्रतिबिम्बित किया जा सके। इस संदर्भ में, सुरक्षा परिषद् में स्थायी सदस्यता की अधिप्राप्ति से विश्व सत्य संरचना में भारत की सत्ता स्थिति में सुधार होगा। जैसा कि हमने पहले उल्लेख किया है, संस्थाएँ सौम्य-सत्ता क्षमताओं की स्रोत बन गई हैं। प्रतिष्ठारोपित संस्थाएँ प्राय: अपनी स्थिति को वैधता प्रदान कराने के लिए संस्थाओं का प्रयोग करती हैं। उभरती हुई शक्तियाँ जैसे चीन अपनी सत्ता महत्वाकांक्षाओं के और अधिक विस्तार के लिए संस्थाओं का अधिकाधिक प्रयोग कर रही हैं। भारत ने भी पहले जी-77, जी-20 और गुट निरपेक्ष ग्रुप में अपने नेतृत्व के माध्यम से आंतरिक तौर पर संस्थागत शक्ति का प्रयोग किया है। संयुक्त राष्ट्र शान्ति स्थापना प्रयासों में भारत के योगदान ने उसे कुछ संस्थागत प्रभाव मुहैया कराया है। सदस्यता के लिए किसी भी निर्देशन में संयुक्त राष्ट्र पद के लिए भारत का दावा

जापान, जर्मनी, इण्डोनेशिया, संयुक्त अरब अमीरात-ब्राजील आदि जैसे प्रतिद्वंद्वियों में सबसे मजबूत है।

बोध प्रश्न 2

नोट : i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए रिक्त स्थान का प्रयोग करें।

ii) अपने उत्तर के लिए इकाई के अंत में संकेत देखें।

1) भारत को उभरती हुई प्रमुख शक्ति के रूप में क्यों माना गया है?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

3.6 सारांश

हमने देखा है कि अन्तरराष्ट्रीय व्यवस्था राज्यों की संप्रभु समानता के सिद्धान्त पर आधारित है यद्यपि व्यावहारिक तौर पर सत्ता में विभेदन पर आधारित कुलीन तंत्र राजनीतिक संरचना पर वर्चस्व रखता है। तथापि, अन्तरराष्ट्रीय सत्ता संरचना गतिशील है क्योंकि सत्ता के घटक निरंतर परिवर्तनशील हैं। विश्व सत्ता संरचना में भारत की स्थिति के बारे में अस्पष्टता इस तथ्य से प्रकट होती है कि भारत एक मध्यस्तरीय शक्ति है जिसके पास अन्तरराष्ट्रीय व्यवस्था को प्रभावित करने वाले पर्याप्त सुदृढ़ और सौम्य शक्ति संसाधन नहीं है अपितु इसी के साथ अन्तरराष्ट्रीय राजनीति में उद्देश्य के प्रति इन संसाधनों की कोई कमी नहीं है।

जैसा कि हमने देखा है कि भारत ने समय के साथ-साथ अपने सुदृढ़ शक्ति संसाधनों जैसे आर्थिक, सैन्य तथा प्रौद्योगिकीय संसाधनों, का विकास किया है। इन संसाधनों की सौम्य शक्ति क्षमताओं से पूर्त्ति करते हुए भारत स्वयं को प्रमुख सत्ता उम्मीदवार के रूप में पुनर्स्थापित करने में सफल रहा। तथापि, भारत को प्रमुख सत्ता प्रास्थिति के दावे के लिए कुछ आंतरिक और बाह्य बाधाओं पर काबू पाना है। आन्तरिक तौर पर इसे अभी आर्थिक बाधाओं पर काबू पाना है तथा अपने समाज को समेकित करना है। बाह्य तौर पर उसे प्रमुख शक्तियों के परिरोधन प्रयासों से सफलतापूर्वक निपटना है तथा शासन की अन्तरराष्ट्रीय संस्थाओं में एक वैध स्थिति प्राप्त करनी है।

3.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

बाजपाई, कान्ति एंड अमिताभ मट्टू (सं.) 1996, *सिक्योरिंग इंडिया: स्ट्रैटेजिक थकौट एंड प्रेक्टिस,* नई दिल्ली: मनोहर प्रकाशन।

हैरिसन, एस. सेलिग एंड जॉफरी केम्प (सं.) 1993, *इंडिया एंड अमेरिका आफर कोल्ड वार,* वाशिंगटन डी सी: कारनेजी इनडवमेंट फॉर इंटरनेशनल पीस।

नायर आर. बलदेव एंड टी. वी. पॉल, 2003, *इंडिया इन द वर्ल्ड आर्डर सर्चिंग फॉर मेजर पावर स्टेटस,* केम्ब्रिज: केम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस।

परकोविच, जार्ज, 1999, *इंडियाज न्यूक्लियर बम: द इम्पैक्ट आन ग्लोबल प्लोरीफरेशन,* बर्कले: यूनिवर्सिटी ऑफ कैलीफोर्निया प्रेस।

पूलोस, टी. टी., 1996, *द सीटीबीटी एंड द राइज ऑफ न्यूक्लियर नेशनलिज़्म इन इंडिया,* नई दिल्ली लॉरैनर्स बुक्स।

सरदेसाई, दामोदर एंड राजू जी. सी. थॉमस (सं.) 2002, *न्यूक्लियर इंडिया इन ट्वेंटीफस्ट सेंचुरी,* न्यूयार्क, पालग्रेव।

सिंह, जसवंत, 1998, *डिफेण्डिंग इंडिया,* न्यूयार्क, सेंट मार्टिन'स प्रेस।

3.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) सौम्य सत्ता संसाधन अमूर्त संसाधन हैं जैसे मानदण्ड, अन्तरराष्ट्रीय संस्थाओं में नेतृत्व की भूमिका, संस्कृति, राज्य की क्षमता, रणनीति, और राष्ट्रीय नेतृत्व। सौम्य शक्ति क्षमताएँ कम निग्रही होती हैं तथा राज्य को आम राय (समझौता) की ओर प्रेरित करने तथा सहयोजन करने (समान उद्देश्यों के सहयोजन के लिए दूसरों को तैयार करना) में सक्षम बनाती हैं।

2) प्रमुख सत्ताएँ सत्ता के अधिकांश, यदि सभी न हो, घटकों पर नियंत्रण रखती हैं। उनके पास अन्तरराष्ट्रीय व्यवस्था के स्वरूप को अवधारित करने की इच्छा और क्षमताएँ होती हैं। दूसरे शब्दों में, उनके भूमंडलीय अथवा महाद्वीपीय हित होते हैं तथा उनके सुरक्षा उद्देश्य क्षेत्रीय रक्षा से परे होते हैं तथा उनमें अन्तरराष्ट्रीय व्यवस्था में शक्ति और व्यवस्था को बनाए रखना शामिल होता है। मध्यस्तरीय शक्तियाँ, दूसरी तरफ, कतिपय क्षेत्र में प्राय: वर्चस्व अथवा उत्कृष्टता प्राप्त होती है। कुल मिलाकर उनके पास अन्तरराष्ट्रीय व्यवस्था को प्रभावित कराने के लिए कोई यंत्र नहीं होता अपितु प्रमुख शक्तियों के अवांछनीय निर्णयों का विरोध करने के लिए उनके पास पर्याप्त क्षमताएँ होती हैं।

3) मध्यस्तरीय शक्तियाँ प्रमुख शक्तियों के वर्चस्व को संभाव्य चुनौती प्रस्तुत करती हैं। अत: प्रमुख शक्तियाँ मध्यस्तरीय शक्तियों के प्रभाव को क्षेत्र तक सीमित रखने की माँग करती हैं। प्रमुख सत्ता प्रास्थिति के लिए भारत की महत्त्वाकांक्षाओं पर संयुक्त राज्य और चीन द्वारा अपनाई गई परिरोधन नीतियों से नियंत्रण लगा है। इन दोनों शक्तियों ने पाकिस्तान की सैन्य क्षमताओं का निर्माण हीं नहीं किया है अपितु दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय संघर्ष में उसका पक्ष भी लिया है। इसके अतिरिक्त, संयुक्त राज्य ने अप्रसार शासन को मजबूती प्रदान करने के छद्म वेश में भारत की सैन्य और औद्योगिक क्षमताओं की वृद्धि पर नियंत्रण की माँग की।

बोध प्रश्न 2

1) भारत को दो महत्त्वपूर्ण कारणों से उभरती हुई शक्ति के रूप में देखा जाता है। प्रथम, प्रमुख शक्तियों की सुदृढ़ शक्ति क्षमताओं के मुकाबले इसकी सुदृढ़ शक्ति क्षमताएँ अन्य क्षेत्रीय सत्ताओं की तुलना में पर्याप्त रूप से अधिक हैं। दूसरे, भारत सुदृढ़ शक्ति क्षमताओं के लगभग सभी सूचकांकों में अपनी स्थिति को मजबूत कर रहा है यद्यपि सुधार का स्तर एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में बदल जाता है।